Quest Journals
Journal of Research in Humanities and Social Science
Volume 9 ~ Issue 3 (2021) pp.: 53-55
ISSN(Online):2321-9467
www.questjournals.org

Research Paper

संगीत कला पर सार्वदेशिक पुनर्जागरण का प्रभाव

डॉ0 प्रभा वार्ष्णेय
एसोसिएट प्रोफेसर, (संगीत विभाग)
श्री टीकाराम कन्या महाविद्यालय,
अलीगढ

दे ा के भाासन का स्थानान्तरण प्रत्यक्षतः अंग्रेजों के हाथों में चले जाने के राजनीतिक पहलुओं के अलावा आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक पहलू भी थे। सन् 1857 में भड़के भारतीय स्वतन्त्रता के प्रथम संग्राम से अंग्रेजों ने भी बहुत सी नसीहतें लीं और तद्नुसार उनकी सामाजिक और सांस्कृतिक नीतियों में भी बहुत से बदलाव आये। भारतीयों के सम्भावित प्रतिरोध से बचने हेतु उन्होंने भारतीय सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन पर अपने प्रभाव को विस्तारित करने की सघन चेश्ट कर दी। उधर दूसरी ओर भारतीय भी अपनी असफलता से खिन्न होकर अपना नैतिक बल खोकर अंग्रेजों के समक्ष नतमस्तक हो गये। भारतीय जनमानस ने तथा वि ोशतः भारतीय सम्भ्रान्त समाज ने यह एक बड़ी सीमा तक स्वीकार कर लिया कि अंग्रेज एक विकसित समाज के लोग हैं और वे सभ्यता और संस्कृति की दृश्टि से वि व में सर्वोच्च हैं। अतः उनका पि चमी संस्कृति और मूल्यों के प्रति आकर्शण और अनुकरण बढ़ने लगा। संगीत भी इस प्रभाव से अछूता नहीं रहा। अतः इस कालखण्ड (1857 से 1947) का अलग से वर्णन और वि लेशण करना आव यक है। किन्तु यहाँ यह ध्यान रखना भी आव यक है कि 1857 से पूर्व भी अंग्रेजों का दे ा पर काफी व्यापक प्रभाव हो चुका था। व्यावहारिक रूप से अंग्रेज दे ा पर इस समय से पूर्व भी काबिज थे। अतः इन दोनों कालों में गुणात्मक रूप से बहुत बड़ा अन्तर नहीं किया जा सकता है। वस्तुतः और सामान्यतः दोनों काल एक–दूसरे पर प्रक्षेपित (ओवरलेप) होते हैं तथा दोनों कालों के तमाम संगीतज्ञ भी साझे हैं। किन्तु इस सबके बावजूद यह नहीं कहा जा सकता है कि इन दोनों कालों को संगीत के विकास के संदर्भ में अलग–अलग देखने के पर्याप्त कारण नहीं हैं।

सन् 1857 के परिवर्ती काल सार्वदे िक पुनर्जागरणकाल में संगीत के विकास के संदर्भ में मुख्य परिवर्तनों की दि ाायें कम्पनी के राज्य की समाप्ति और अंग्रेजों के प्रत्यक्ष भाासन के प्रादुर्भाव तथा सार्वदे िक पुनर्जागरण ने संगीत के विकास की दि ा को भी बदलना प्रारम्भ कर दिया। इसके फलस्वरूप संगीत के क्षेत्र में मुख्य परिवर्तन निम्न प्रकार दिखाई दिये :

1. मुगल साम्राज्य के पतन और अधिसंख्य राजे–रजवाड़ों के अन्त ने तमाम संगीतकारों और संगीतज्ञों को निराश्रित कर दिया। अब तक उनके लिये कोई दूसरा आ ियाना भी नहीं बना था।
2. अधिकां ा 'घराने' किसी राजे–रजवाड़े या नवाबी परम्परा से जुड़े थे। जब यह राजे–रजवाड़े टूटने लगे तो 'घरानों' की परम्परा पर भी संकट के बादल मंडराने लगे। घरानों को मिलने वाली स्थायी राजनीतिक और आर्थिक सुरक्षा टूटी तो उनका क्षरण प्रारम्भ हो गया। साथ ही इस स्थिति के कारण बहुत से संगीतज्ञों को अपनी कला को छोड़कर कोई दूसरा पूर्णकालिक या अं ाकालिक व्यवसाय अपनाना पड़ा या अपनी आगे वाली पीढ़ी को अन्यत्र मोड़ना पड़ा। बहुत से छोटे घराने टूट गये या कमजोर पड़ गये उनका घरानाजनित गौरव (और किसी सीमा तक अभिमान) भी भंग होने लगा। इस स्थिति में घराना परम्परा की कठोर गोलबन्दी को थोड़ा ढ़ीला किया।
3. गैर अभिजात्य समाज वि ोश रूप से मध्यम वर्ग की विदे ाी संस्कृति और संगीत में रुचि बढ़ी और भारतीय संगीत के स्थान पर उन्होंने विदे ाी नृत्यु और संगीत को वरीयता देना प्रारम्भ कर दिया। दे ा में एक ऐसा बड़ा वर्ग बनना प्रारम्भ हो गया जो पि चमी संस्कृति में इनता रच–बस गया कि उसने 'पिछड़ेपन के प्रतीक भारतीय गायन, वादन और नृत्यु' से पअना पूरा नाता तोड़ लिया और स्वयं और अपनी आने वाली पीढ़ी को 'पि चमी क्लब संस्कृति' से सराबोर कर लिया। इसके फलस्वरूप भारतीय संगीत को एक अपूर्णनीय क्षति उठानी पड़ी।
4. दे ा में पि चमी ढंग के तमाम 'कॉन्वेन्ट' स्कूल खुल गये जो स्वाभाविक रूप से चर्चों (गिरजाघरों) से सीधे–सीधे जुड़े थे। यह भी एक माध्यम था जहाँ से पि चमी संगीत भारतीय संगीत पर हावी होने लगा। इन स्कूलों में पढ़ने वाले बच्चों को गिरजाघरों के संगीत और प्रार्थना सभाओं में सम्मिलित होना ही पड़ता था। यहाँ अलग से भी संगीत ि ाक्षा दी जाती थी। अतः भारत की नयी पीढ़ी पि चमी ढंग के संगीत की लहरों के साथ बहने लगी।
5. अंग्रेजों के साथ अंग्रेजी ढंग की ि ाक्षा पद्यति भी दे ा में आई। यह ि ाक्षा पद्धति 'गुरुकुल' और 'घराना' जैसी व्यवस्थाओं को अप्रसांगिक बनाने लगी। इस प्रकार संगीत ि ाक्षा की उक्त अनौपचारिक संस्थाओं का स्थान औपचारिक संगीत ि ाक्षण ने लेना प्रारम्भ कर दिया। इस काल में पंडित विश्णु दिगम्बर पुलस्कर ने गान्धर्व संगीत विद्यालय खोलकर घराने के एकाधिकार को कड़ी चुनौनी दी और संगीत ि ाक्षा के द्वार उन सभी जिज्ञासु विद्यार्थियों के लिये खोल दिये जिन्हें संगीत में किसी भी प्रकार की रुचि थी। रवीन्द्रनाथ टैगोर जैसे अन्तर्राश्ट्रीय प्रतिश्ठित व्यक्तित्व ने भारतीय संगीत की खुली ि ाक्षा की वकालत की। दिल्ली, लखनऊ, ग्वालियर, कलकत्ता, मद्रास, पूना आदि स्थानों पर घरानों के विरोध के बावजूद संगीत ि ाक्षा के केन्द्र खुल यद्यपि यह सत्य है कि यह औपचारिक संस्थायें काफी समय तक केवल 'औपचारिक' बनी रहीं जबकि घराने संगीत ि ाक्षा के मुख्यधारा (मेनस्ट्रीम) के केन्द्र के रूप में पहचाने जाते रहे।
6. सन् 1857 से पूर्व के काल में सार्वजनिक मंचीय प्रद ान जैसी व्यवस्था लगभग न के बराबर थी इससे पूर्व संगीत के प्रद ान या तो राजदरबारों में होते थे या इधर–उधर कभी–कभी मेला स्थलों या धार्मिक स्थलों पर किन्तु अंग्रेजों के प्रभावी होने पर वे अपने दे ा की रंगमंचीय सार्वजनिक परम्परा को भी दे ा में ले आये। अतः उच्चकोटीय कलाकार जो पूर्ववर्ती काल में राजा–महाराजाओं और बाद ााह–सुल्तानों–नवाबों की 'एकाधिकारी सम्पदा' या 'बंधुआ गुलामी' में होने के कारण जन समान्य को सुलभ नहीं थे वे अब सार्वजनिक रंगमंचीय प्रद ान के माध्यम से 'जनता के कलाकार' होने लगे। जहाँ अंग्रेज कालोनियाँ काफी मजबूत थीं (वि ोश रूप से प्रारम्भिक तौर पर कलकत्ता, मद्रास, बम्बई जैसी अंग्रेज रेजीडेन्सीज) वहाँ अंग्रेजों ने सार्वजनिक रंग ाालायें (ऑडीटोरियमों) का निर्माण भी करायां उनमें से तमाम अतिभव्य ऑडीटोरियम आज भी खड़े हैं और इस बात के गवाह हैं कि अंग्रेजों ने उच्चतमकोटि के संगीतकारों और उनसे सम्बद्ध घरानों को रजवाड़ों और बाद ााहों की अबाध और एकाधिकारपूर्ण चाकरी से मुक्त कराकर उनकी जनता से नजदीकियों को बढ़ा दिया। संगीत के विकास की पुश्टि से यह एक अति सकारात्मक कदम था।
7. अंग्रेजों के प्रभुत्व के साथ–साथ अंग्रेजों की सोच और मनोविज्ञान भी भारतीय जनमानस पर छाने लगा। इस सोच ने संगीत के क्षेत्र में भी लोगों के दृश्टिकोण को बदला। मुगलकाल में तथा वि ोश रूप से पतनोन्मुखी मुगल बाद ााओं के काल में (जिसका विस्तृत विवरण पूर्व के अध्याय में दिया जा चुका है) संगीत और नृत्यु को निचले दर्जे की कला के रूप में देखा जाने लगा था। गवैयों, नर्तकों और नर्तकियों को एक असम्मान की दृश्टि से देखने की प्रवृत्ति बढ़ने लगी थीं इन कलाओं को मनोरंजन की कला के रूप में देखा जाने लगा था।

वि ोश रूप से महिला गायकों और नर्तकियों को तो समाज में इतनी बदनामी और कुत्सित दृश्टि से देखने की प्रवृत्ति हो गयी थी कि कोई भी सम्भ्रान्त और चरित्रवान महिला सार्वजनिक प्रद न का साहस भी नहीं कर सकती थी। मुहम्मद भााह रंगीले, जहाँदार भााह और फर्रुखसियर के समय में तो महिला संगीत कलाकारों और रखैलों–वै याओं में अंतर ही मिटने लगा था। इस सम्बन्ध में सु ीला मिश्रा का कथन मूल भाशा में वि ोश रूप से दृश्टव्य है।

"Youards the end of the last century, Hindustani music has run into "doldrums". Music has become the monopoly of a small coteric of illiterate professional who jealously guarded their art. Living luxuriously under lavish courtly patronage of these narrow-minded custodians of music took care not to create rivals out of their own pupils. Gradually, these professionals acquired disrepute and the music whom they served fell from her high pedestal into the depth of public apathy and alien contempt. The so called intellectual began to look down with 'moral horror' on this noble art No other country in the world has placed music so contemptuously low, and now nowhere were the natural instincts of young for music and rhythm so completely repressed, contored and banned, as they happened to be in the country that Vishnu Narain was born to serve."

अंग्रेजों के प्रभुत्व के साथ ही संगीत के प्रति लोगों के दृश्टिकोण में आधारभूत परिवर्तन आना प्रारम्भ हो गया। संगीत के प्रति यूरोपीय दृश्टिकोण बहुत ही स्वस्थ और सकारात्मक था। वहाँ संगीत की उसी तरह अति सम्मानजनक महान कला के रूप में देखा जाता था जैसा कि वैदिक और पूर्व वैदिक काल के भारतीय समाज में। यही नहीं पि चम यूरोप में संगीत को सामाजिक, राजनीतिक परिवर्तन के एक प्रभावी यंत्र के रूप में भी स्वीकार किया गया था। यही वजह थी कि कतिपय संगीतकारों को यूरोपीय जनमानस अपने पुनर्जागरणकाल के महानायक के रूप में स्वीकार करता था। उनका वि वास था कि यह संगीतकार यूरोप की महान उदारवादी जनतान्त्रिक क्रांतियों और तीव्र विकास के अग्रगण्य आधारभूत कर्णधार थे। अतः भारत में उनके प्रभाव क्षेत्र के विस्तार और गहराव के साथ ही संगीत के प्रति लोगों के दृश्टिकोण में भी तेजी से परिवर्तन का सिलसिला भाुरू हो गया। संगीत को राजदरबारों, इजारेदारों, जमींदारों, अमीरों और बड़े व्यापारियों की चहुलबाजी और वै याओं की अदाकारी का अभिन्न अंग मानने के वजाय एक सम्मानित कला के रूप में देखने की परम्परा का पुनर्जागरण होने लगा। अब यह कला समाज के सम्भ्रान्तों और सम्मानित लोगों के सीखने लायक कला मानी जाने लगी। अतः केवल लड़के ही नहीं बल्कि उच्चकुलीन लड़कियाँ भी संगीत और नृत्य की ि ाक्षा लेने लगीं। संगीत विकास की दृश्टि से यह एक अति सकारात्मक परिवर्तन था।

8. चर्च के साथ संगीत का घनिश्ठ सम्बन्ध होने से, संगीत के आध्यात्मिक पक्ष को भी उच्चकुलीन समाज में उसी प्रकार मान्यता मिलनी प्रारम्भ हो गयी जैसी कि वैदिक काल में थी अन्यथा तो संगीत का आध्यात्म से सम्बन्ध चरमराने लगा था। आध्यात्मिक (या और सही कहा जाय तो केवल धार्मिक) दृश्टि से संगीत का जुड़ाव मुसलमानों के लिये सूफी मजारों पर कब्वाली और हिन्दुओं के लिये केवल कीर्तन तक सीमित हो गया था। किन्तु चर्च के प्रभाव से इस मौलिक भारतीय विचार को बहुत बल मिला कि संगीत आध्यात्मिक उन्नयन की एक महत्वपूर्ण सीढ़ी है। संगीत के विकास की दृश्टि से यह भी एक सकारात्मक प्रभाव ही था।
9. अंग्रेजों के प्रभाव से विस्तार के साथ ही संगीत पर अथवा उसकी विभिन्न विधाओं पर विभिन्न जातियों अथवा सम्प्रदायों के एकाधिकार में दरारें आने लगीं। अब किसी भी प्रकार के संगीत को किसी के द्वारा भी अपनाने, सीखने और उसके प्रद न पर लगी अनौपचारिक सामाजिक बंदि ों टूटने लगीं। इसे भी संगीत के विकास की दृश्टि से एक सकारात्मक बदलाव की संज्ञा दी जा सकती है।
10. अंग्रेजों का जैसे–जैसे दे ा पर कसाव बढ़ता गया वैसे–वैसे संगीत के क्षेत्रीय केन्द्र भी बदलने लगे। अंग्रेजों की मजबूत रेजीडेन्सियों और उसके आसपास संगीत के केन्द्र पनपने लगे। अब संगीत के उच्च केन्द्र दिल्ली, आगरा, रामपुर, लखनऊ, ग्वालियर ही न रहकर कलकत्ता, मद्रास, बम्बई, बंगलौर हो गये। बंगाल और महाराश्ट्र में तो संगीत के क्षेत्र में क्रान्ति सी आ गई। वहाँ तमाम स्थाई रंग ाालायें और चल रंग ाालायें संगीत का प्रद न करने लगीं। इन दोनों क्षेत्रों में आज भी संगीत की महान परम्परा के पीछे यही ऐतिहासिक कारणों की जड़ें हैं।
11. तमाम अलगावों के बावजूद भी भारतीय और पि चमी संगीत में एक अबाध मिश्रण की प्रक्रिया प्रारम्भ हो गई और इससे व ाीभूत भारतीय संगीत में कुछ नये आयाम खुलने लगे।
12. अंग्रेजों के भाासन विस्तार के साथ–साथ दे ा में एक आर्थिक क्रांति का भी श्रीगणे ा हुआ। यातायात के तमाम साधनों के अपूर्व विस्तार (खासतौर पर रेल और मोटर ट्रान्सपोर्ट की भाुरूआत) से भारतीय संगीत के सम्मिश्रण होने लगा और क्षत्रिय विशमतायें तथा बन्दि ों टूटने लगीं।
13. इस काल की सबसे महत्वपूर्ण और क्रान्तिकारी बात थी संचार साधनों का अति ाय विस्तार। टेलीफोन, सिनेमा तथा रेडियो, यद्यपि इस काल से पूर्व ही अविश्कृत हो चुके थे लेकिन उनका बहुतायत से प्रयोग इस काल (वि ोशतः बीसवीं भाताब्दी) में ही हुआ। रेडियो और सिनेमा के अविश्कार और प्रयोग ने संगीत के प्रगति और विकास की एक नयी कहानी, एक नये ढंग से ही लिखनी भाुरू कर दी। इससे संगीत का सार्वदे ाक स्वरूप उभरने लगा।
14. भारतीय संगीत पर पि चमी प्रभाव केवल एकतरफा ही नहीं था। यानी ऐसा नहीं है कि भारत ने संगीत के पि चमी स्वरूप का केवल आयात ही किया। बल्कि इस काल में तमाम यूरोपीय लोगों ने भारतीय संगीत की उच्चगुणवत्ता को सराहा और यूरोप में उसका प्रचार–प्रसार भी किया। इस परिवर्तन ने भारतीय संगीत और संगीतज्ञों के सम्मान में भारी वृद्धि की।
15. पि चमी ि ाक्षा पद्यति के आगमन के साथ–साथ भारतीय संगीत की ि ाक्षा के औपचारिकीकरण से संगीत की ि ाक्षा के प्रद न और क्रियात्मक पक्ष के अतिरिक्त उसके भाास्त्रीय और तकनीकी पक्षों का भी पठन–पाठन भाुरू हुआ। इससे संगीत की तकनीकी ि ाक्षा के अतिरिक्त, संगीत में भाोध और अनुसंधान के भी नये रास्ते खुलने लगे। अब तक भारतीय संगीत ि ाक्षा का यह पक्ष लगभग पूर्णतः उपेक्षित था।
16. पि चमी प्रभाव से कहीं भारतीय परम्परागत संगीत पूर्णतः तिरोहित न हो जाय, यह चिन्ता भी तमाम भारतीय परम्परागत संगीत पूजकों को सताने लगी। अतः उन्होंने भारतीय संगीत की परम्परागत पवित्रता को अक्षुण्ण रखने के लिये रक्षात्मक उपक्रम भी तत्परता से अपनाने प्रारम्भ कर दिये। यही वजह थी कि इस काल में पंडित विश्णु दिगम्बर पुलस्कर तथा विश्णु नारायण भातखण्डे जैसे प्रातःस्मरणीय व्यक्तित्वों का महान प्रादुर्भाव हुआ जिनकी साधना से भारतीय संगीत के सकारात्मक पक्षों और उसकी वि ाुद्धता की रक्षा हो सकी। इन मनीशियों को पि चमी संस्कृति और संगीत से कोई घृणा नहीं थी किन्तु साथ ही वे भारतीय संगीत की उन महान परम्पराओं की रक्षा भी करना चाहते थे जो सदियों की तपस्या से उदभुत हुई थीं।
17. उत्तर मध्यकाल में संगीत के असम्मानित और गिरे स्थान तथा यूरोप में संगीत के सम्मानित स्थान को देखकर कुछ भारतीय संगीतज्ञ अति उद्वेलित हो उठे और उनमें इस चेतना की लहर बहने लगी कि आखिर भारतीय संगीत जो इतनी श्रेश्ठ और सतत् साधना से अर्जित कला है उसकी यह उपेक्षा और असम्मान क्यों? इससे व्यथित होकर कुछ संगीतकारों ने तो यह कमर कस ली कि वे भारतीय संगीत को उच्च स्थान दिलाकर रहेंगे।

पंडित विश्णु दिगम्बर पुलस्कर जी का नाम इस दृश्टिकोण से उच्चस्थ है। उन्होंने संगीतज्ञों के उस समुदाय का एक प्रकार से नेतृत्व किया जो संगीतज्ञों को कश्टप्रद और अपमानजनक स्थिति से निकालना चाहते थे। उस काल में संगीत ि ाक्षकों को बेरोजगार, आवारा और निकृश्ट श्रेणी का समझा जाता था। वे अपने तानपूरा, हारमोनियम या सितार लेकर आयोजकों की चापलूसी करते फिरते थे जिससे कहीं तो उनकी कला के प्रद न का आयोजन हो जाय। प्रतिश्ठित समाज और अच्छे घरों में संगीत के सीखने और कला प्रद न पर एक प्रकार से

सामाजिक मनाही थी तथा अच्छे घरों में संगीतज्ञों का प्रवे ा ही एक प्रकार से वर्जित था। सारा जीवन और सुख–सुविधाओं का त्यागकर अर्जित की गई कला का यह अपमान पंडित जी से नहीं देखा गया तथा वे बहुत सोचने के बाद इस निश्कर्श पर पहुँचे कि संगीत विद्या अन्य किसी भी विद्या से किसी दृश्टि से कम दर्जे की नहीं है। गायक, वादकों को सैकड़ों रोगों का अभ्यास व चीजों को कंठस्थ करना पड़ता है। आवाज तैयार करने के लिये कठोर परिश्रम करना पड़ता है। आखिर क्या बात है कि इतनी मेहनत से हासिल की विद्या को समाज में उचित सम्मान नहीं मिलता। यह बात भी सच थी कि तवायकों की संगीत के कारण गायकों, वादकों को अनेकों व्यसन लग जाते थे। परन्तु इसमें गायकों का इतना दोश नहीं था। समाज से उपेक्षित होने पर उन औरतों को सिखाने के सिवाय जीविका का अन्य कोई मार्ग उनके पास नहीं रहता था।

अतः सर्वप्रथम पंडितजी ने संगीत की सामाजिक प्रतिश्ठा बढ़ाने का संकल्प किया।

उपरोक्त स्थिति से आक्रान्त पंडिजी जी ने संगीत से जुड़े चारण वाक्या ों, एय्या ी की भाब्दावली, श्रृंगार रस और वासना से जुड़े रोमांटिक लब्जों को संगीत की भाशा और साहित्य से विलग कर दिया तथा उनके स्थान पर भक्ति रसयुक्त गीतों, भाब्द–विन्यासों और भाशा– ौलियों का विकास किया।

18. प ि चमी संगति, संस्कृति और संगीत के प्रभाव तथा भारत के मनीशियों की साधना के फलस्वरूप इस युग में संगीत की सामाजिक प्रतिश्ठा जो पतनोन्मुखी मुगलकाल में धूल में मिल चुकी थी पुनः प्रतिश्ठित होने लगी। संगीत आध्यात्म, भक्ति और तन्मयतापूर्ण त्याग का सन्मार्ग बन गया।

अति उच्चकुलीय तथा सम्मानित व्यक्तित्व संगीत से जुड़ने लगे। रवीन्द्रनाथ टैगोर, उदय ांकर, रुक्मणी देवी, दिलीपचन्द राय, दमयन्ती जो ी जैसे व्यक्तियों के जुड़ने से उच्च कुलीन लोगों की भी भारतीय संगीत से जुड़ने की प्रवृत्ति बढ़ी अन्यथा उच्चकुलीन भारतीय (जैसा कि इसी अध्याय के बिन्दु–3 में वर्णित है) केवल प ि चमी संगीत को ही सम्मानित और प्रतिश्ठित मानकर उसी से ही जुड़ रहे थे।

19. 1857 की क्रान्ति के असफल होने के प चात् भारत पर एक छत्र अंग्रेज प्रभुता ने भारत को एक राजनीतिक इकाई यानी 'भारत' का निर्माण प्रारम्भ कर दिया। 'भारत' के निर्माण से दे ा में एकता आई। 1885 में भारतीय राश्ट्रीय कांग्रेस का गठन हुआ और भीघ्र ही दे ा में राश्ट्रभक्ति और दे ाप्रेम की लहर चलने लगी। इसके साथ ही दे ा में दे ाप्रेम से ओतप्रोत गीत–संगीत का विकास होना भुरू हो गया। 'दे ाभक्ति के संगीत' के विकास की इस धारा ने जहाँ एक ओर तो राश्ट्रीय आंदोलन को प्रोत्साहित किया तो दूसरी ओर संगीत को भी प्रतिश्ठापूर्ण स्थान दिलाया। इस प्रकार के मोड़ ने संगीत की फलनात्मक उपयोगिता (फंक्सनल यूटिलिटी) को भी सिद्ध कर दियां संगीत की इस फलनायक उपयोगिता के संदर्भ में पंडित विश्णु नारायण भातखण्डे का यह कथन वि ोश रूप से दृश्टव्य है। उन्होंने बनारस हिन्दू वि वविद्यालय की स्थापना के समय अविस्मरणीय रूप से कहा ''भारतीय संगीत का विशय इतना विस्तृत और उसका इतिहास ऐसा फैला हुआ है कि उसका यथायोग्य विवरण मैं कर सकूँगा अथवा इसमें मुझे पूर्ण संदेह है। तथापि मैं अपने विद्वान और दयालु स्वदे ा बन्धुओं के समक्ष खड़ा हूँ। संगीत के प्रति मैं स्वदे ाप्रेम तथा कर्तव्य की दृश्टि से आकर्शित हुआ हूँ। ऐसे जातिय (राश्ट्रीय के अर्थ में प्रयुक्त) आनन्द के अवसर संगीत के समान विस्तृत विशय पर दो भाब्द कहने की आज्ञा चाहता हूँ। संगीत एक उपयोग वस्तु है और यदि आप उसकी उपयोगिता स्वीकार कर (यहाँ अर्थ फलनात्मक उपयोगिता से ही है) उसे भावी ि ाक्षा प्रणाली में स्थान प्रदान करेंगे तो मैं अपने परिश्रम को सार्थक समझूँगा। मुझे आ ा है आप लोग मेरे निवेदन को धैर्य और कृपादृश्टि से सुनेंगे। मैं स्वयं कवि नहीं हूँ। वैसे ही इस विशय में मेरे प्राकृतिक बुद्धि नहीं है, किन्दु ई वरीय कला की ओर बाल्यावस्था से प्रेम होने के कारण मैं उसका एक क्षुद्र उपासक मात्र हूँ।''

उपरोक्त कथन से दो बातें बड़ी स्पश्ट होती हैं। प्रथम यह कि इस काल के आने तक संगीत की औपचारिक और आधुनिक ि ाक्षा को एक अच्छी खासी मान्यता प्राप्त हो चुकी थी। यदि ऐसा न होता तो बनारस हिन्दू वि वविद्यालय की नींव पड़ते ही भातखंडे जीी को संगीत विशय के प्रतिनिधि के रूप में इतने सम्मान से कैसे आमंत्रित किया जाता, किन्तु उनके भाशण के रेखांकित भाब्द यह भी इंगित करते हैं कि उस समय तक संगीत की फलनात्मक उपयोगिता को अन्य विशयों की फलनात्मक योग्यता की भाँति स्वयं सिद्ध नहीं माना जाता था। यही वजह है कि वे अपने भाशण में इस विशय की फलनात्मक उपयोगिता के विशय में श्रोताओं को काफी विनयपूर्वक आ वस्त करते हुए दिखाई देते हैं।

20. विभिन्न संगीतकारों के प्रयासों से भारतीय संगीत का प्रद ान के अलावा अकादमिक और तकनीकी पक्ष भी उभरा जिसका अब तक लगभग कोई अस्तित्व ही नहीं था। संगीत के भाास्त्रीय पक्ष पर गोश्ठियाँ, सम्भाशण और व्याख्यान प्रारम्भ हो गये। भातखंडे जी ने स्थान–स्थान पर संगीत के सम्बन्ध में व्याख्यान दिये। बनारस हिन्दू वि वविद्यालय तथा कलकत्ता वि वविद्यालय में भी संगीत विशय पर गोश्ठियाँ तथा सम्भाशण हुए।
21. इस काल में संगीत पर, नये रूप, कलेवर तथा प ि चमी भौली पर आधारित उच्चकोटीय साहित्य और अध्ययन सामिग्री का प्रका ान हुआ। यद्यपि संगीत पर ग्रंथ रचना की भारतीय परम्परा प्राचीन थी, किन्तु उसका स्वरूप परम्परागत था। इस युग में इस परम्परागत स्वरूप में भी परिवर्तन आया तथा भारतीय संगीत में आधुनिक प्रकार की साहित्य–समिग्री प्रका ि ात होना प्रारम्भ हो गयी। यद्यपि यह बात अलग है कि यह प्रगति अति मंद थी तथा आज स्वतंत्रता के अर्द्ध ाताब्दी के प चात् भी संगीत में सुलभ साहित्य का स्वरूप अन्य विशयों की अपेक्षा पीछे है।
22. पतनोन्तुखी मुगलकाल में साहित्य और संगीत में अति घनिश्ठता पैदा हो गयी थी। यहाँ तक कि वे कई मायनों में एकाकार हो गये थे। किन्तु यह रि ते 1857 के प चात् ढीले पड़ने लगे। यद्यपि रवीन्द्रनाथ टैगोर साहित्य ऐसे तमाम व्यक्तित्व थे जिनका योगदान दोनों पक्षों में साक्षा था तथापि यह रि ता काफी सीमा तक टूटने लगा। हिन्दी कविता में 'अगेय' कविताओं के सृजन की प्रवृत्ति, गद्य साहित्य के क्रांतिकारी विकास ने संगीत और साहित्य के बीच की दूरियों को बढ़ा दिया। बीसवीं भाताब्दी में 'कवि सम्मेलनों' और 'मु ायरों' का प्रचलन भी हो गया, जहाँ उन लोगों की प्रस्तुतियों को भी सुना और सराहा जाने लगा जो संगीत में ज्ञान– ून्य थे किन्तु साहित्य में निश्णात थे। कवि सम्मेलनों और मु ायरों में अगेय कविताओं की प्रस्तुतियाँ भी होने लगीं। इस प्रकार संगीत और साहित्य पूर्णतः अलग विधायें हो गयीं।

संदर्भ –

1. भारतीय संगीत का इतिहास – डॉ0 भारच्चंद्र श्रीधर परांजपे
2. संगीत वि ारद – वसन्त
3. भारतीय संगीत का इतिहास – डॉ0 ठाकुर जयदेव सिंह
4. इतिहास का मुआयना – डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद सिंह
5. संगीत पत्रिकाएँ
6. उत्तर भारतीय संगीत का इतिहास – भातखण्डे जी
7. भारतीय संगीत का ऐतिहासिक वि लेशण – स्वतन्त्र भार्मा